Course - XVII - History of Modern India (1707-1885)
M.A. IV Sem. (History)

Topic - अठारहवीं शताब्दी में भारत

जिस मुगल साम्राज्य ने अपनी उपलब्धियों से उस समय के विश्व को आश्चर्यचकित कर दिया था, अठारवीं शताब्दी के प्रारम्भ में यह साम्राज्य निरंतर पतन की ओर अग्रसर हुआ। वास्तव में यदि देखें तो औरंगजेब का शासन काल मुगल-साम्राज्य का सांध्य काल था, जो प्रकृति के उस नियम को साक्षी बनने जा रहा था, जिसमें उत्थान और पतन अवश्यंभावी होता है।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद आगामी 52 सालों में आठ सम्राट दिल्ली की गद्दी पर बैठे। भारत के विभिन्न भागों में अनेक देशी व विदेशी शक्तियों ने अनेक राज्यों की स्थापना की। देखते-ही देखते बंगाल, अवध और दक्कन आदि सूबे मुगलसत्ता के नियंत्रण से बाहर निकल गए। देश की उत्तरी-पश्चिमी से विदेशी आक्रमण शुरू हो गए, तो अवसर पाकर विदेशी व्यापारिक कंपनियों ने भारत की राजनीति में दखल देना शुरू कर दिया। इन सब थपेड़ों को सहते हुए भी मुगल-साम्राज्य का अवसान बड़ी ही मंद गति से हुआ। मगर साम्राज्य का खोखलापन अधिक दिनों तक उसके पतन की गति को रोकने में सक्षम नहीं रहा। परिणाम स्वरूप 1737 ई. में बाजीराव प्रथम तथा 1739 ई. में नादिर शाह के आक्रमणों ने मुगल साम्राज्य की चूलें हिला दीं 1740 ई. तक यह पतन पूरी तरह स्पष्ट हो चुका था।

मुगल साम्राज्य के अवशेषों पर भारत में भिन्न-भिन्न स्वतन्त्र तथा अर्द्ध स्वतन्त्र राज्यों की स्थापना हुई। इन्हीं शक्तियों में से एक मराठों ने सबसे अधिक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। छत्रपति शाहू के प्रथम तीन पेशवाओं ने अपनी शक्तिसम्पन्न प्रतिभा से मराठा शक्ति

को भारत की सर्वोच्च शक्ति के रूप में स्थापित किया। यूँ तो मुगल सत्ता के बाद भारत की राजनैतिक सत्ता के अधिकारी मराठे ही बने, मगर उन्होंने यह उत्तरदायित्व न संभाल कर बहुत बड़ी राजनीतिक भूल कर दी थी। मराठे मुगल सम्राट को अपना पेंशनर बनाकर ही संतुष्ट हो गए थे।

इन मराठों के अलावा दक्षिण भारत में निजाम-उल-मुल्क ने हैदराबाद में शक्तिशाली राज्य का निर्माण किया। उसके बाद हैदर अली ने मैसूर जैसे सुदृढ़ राज्य की स्थापना की। उधर उत्तरी भारत भी औरंगजेब की मृत्यु के कुछ साल के अंतराल में ही परिवर्तन की ओर अग्रसर हुआ। परिणाम स्वरूप बंगाल, बिहार और उड़ीसा में भी सुसंपन्न और शक्तिशाली राज्यों का निर्माण हुआ। अवध में सादत खाँ बुरहान मुल्क ने विशाल सूबे की स्थापना की। अठारवीं सदी के उत्तरार्द्ध में महाराजा रणजीत सिंह ने कश्मीर, पंजाब और उत्तर-पश्चिम भारतीय भूभाग को विजित कर शक्तिशाली सिख राज्य की स्थापना की।

छोटे-छोटे सूबों में कर्नाटक, रुहेलखण्ड, तथा भरतपुर के राज्य प्रमुख थे। यद्यपि की राजस्थान में राजपूत स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति के रूप में उभरे परन्तु इनके परस्पर झगड़ों के कारण यह राजपूतों की गौरवशाली परंपरा को पुनर्स्थापित करने में सफल नहीं हो सके। वास्तविकता तो यह थी कि यह सभी छोटी-बड़ी शक्तियाँ अपनी आन्तरिक कमजोरियों के कारण, कोई भी भारत को राजनीतिक और आर्थिक स्थिरता नहीं दे सका। अधिकांश शक्तियाँ मध्ययुगीन विचार धाराओं से शासित थी। इसलिए इनकी रूचि भारत को समय की आवश्यकता के अनुरूप आधुनिक विचार और संसाधन मुहैया कराने के प्रति नहीं दिखी। ऐसी परिस्थितियों में इन सूबों के शासकों ने, शासन करने का नैतिक अधिकार गँवा दिया, क्योंकि वे न तो स्वयं की सुरक्षा करने के योग्य रहे, नहीं अपनी प्रजा की सुरक्षा और समृद्धि

के लिए आवश्यक संसाधन जुटा सके। इनकी यह कमजोरियाँ शनैः शनैः अंग्रेजों से पराजय का कारण बनी। जिसके परिणाम स्वरूप कुछ सूबों की सीमाएँ सिमटती गईं तो कुछ का अस्तित्व ही समाप्त हो गया। जिन क्षेत्रीय राजनीतिक शक्तियों का अस्तित्व बच भी गया, वे भी ब्रिटिश सत्ता के अधीन ही रहे। धीरे-धीरे वह ब्रिटिश-सत्ता का शक्ति विस्तार सम्पूर्ण भारत पर हो गया। जिसका विवरण निम्नलिखित है-

— <u>हैदराबाद-राज्य</u> —

दक्कन में स्वतन्त्र सत्ता का स्वप्न देखने वालों में जुल्फिकार खाँ था। उसे 1708ई० में बहादुर शाह ने दक्कन का सूबेदार नियुक्त किया था। जुल्फिकार खाँ ने अपना राज काज चलाने के लिए अपने नायब दाऊद खाँ को पूरी छूट दे दी थी। किन्तु 1713ई० में उसकी मौत के साथ ही, हैदराबाद स्वतन्त्र राज्य बनाने का उसका सपना अधूरा रह गया। दक्कन राज्य मीर कमरुद्दीन चिनकिलिचखाँ के अधीन स्वतंत्र सूबे के रूप सामने आया, वह निजाम-उल-मुल्क के नाम से ज्यादा प्रसिद्ध हुआ।

जहाँ तक निजामुलमुल्क के वंशजों की जानकारी मिलती है, उसका दादा आबिद शेखुल इस्लाम सत्रहवीं सदी में बुखारा से भारत आया तथा उसने मुगलों के यहाँ नौकरी कर ली। इसके बाद निजामुलमुल्क का बाप गाजीउद्दीन फिरोज जंग भी औरंगजेब के समय भारत आ गया और मुगल शासन में कई अहम पदों पर तैनात रहा। स्वयं निजाम को भी सिर्फ 13 साल की आयु में छोटा सा ओहदा मिला। मीर कमरुद्दीन ने बड़ी तेजी से तरक्की की और बड़ी जल्दी उसे 'चिनकिलिचखाँ' की उपाधि मिल गई। जिस समय औरंगजेब की मौत हुई, वह (चिनकिलिचखाँ) बीजापुर में था।

अब औरंगजेब के बेटों में उत्तराधिकार के लिए युद्ध हुआ तो 'चिनकिलिचखाँ' इससे दूर रहा। इस युद्ध में बहादुर शाह प्रथम ने अपने विरोधियों को खत्म कर के मुगल सत्ता प्राप्त की। साथ ही बहादुरशाह ने चिनकिलिचखाँ को दक्कन से लेकर अवध का सूबेदार बना दिया।

बहादुरशाह की मृत्यु के बाद 'मुगल-सत्ता' पर कब्जा करने को मुगल शाहजादों में फिर युद्ध हुआ। इस बार चिनकिलिचखाँ ने जहाँदरशाह के खिलाफ फर्रुखसियर की मदद की। जब फर्रुखसियर राजसिंहासन पाने में सफल हुआ तो उसने चिनकिलिच खाँ को उसकी सेवा के बदले दक्षिण भारत के छह सूबों की सूबेदारी और 'खानखाना' व निजामुलमुल्क बहादुर फतह जंग की उपाधियाँ भी दीं। यह वही समय था, जब चिनकिलिचखाँ ने दक्कन में अपनी स्वतन्त्र सत्ता की स्थापना का ताना बाना बुना था। मगर 1713 ई० में उसे फिर दिल्ली बुला लिया गया। इस तरह दक्कन के सूबेदार के रूप में पहला कार्यकाल 1713-1715 ई० तक रहा। 1715 ई० में सैयद हुसैन अली को उसकी जगह दक्कन का सूबेदार बनाया गया।

पहले उसको मुरादाबाद की सूबेदारी मिली बाद में मालवा का सूबेदार भी बना दिया गया। मालवा में उसने जब अपनी शक्ति का विस्तार किया तो सैयद बन्धुओं को जलन होने लगी। उन्होंने दिलावर खाँ को मालवा का सूबेदार नियुक्त करा दिया, मगर निजामुल मुल्क ने न केवल इसका पुरजोर विरोध किया, बल्कि दिलावर खाँ को एक युद्ध में मौत के घाट उतार दिया। अब उसने असीरगढ़ तथा बुरहानपुर के किलों पर भी अपना आधिपत्य जमा लिया। हुसैन अली उसके विरुद्ध सेना खड़ी करते हुए मारा गया।

हुसैन अली की हत्या के बाद चिनकिलिचखाँ का सितारा फिर बुलंद हुआ तथा वह 1720 ई० में दूसरी बार दक्कन का सूबेदार बनाया और दो वर्ष तक सूबेदार रहा।